एकी आन्दोलन के नायक मोतीलाल तेजावत की डायरी में प्रतिबिम्बित जनजातीय वर्ग की स्थिति–एक विश्लेषण

हरीशकुमार राव
शोधार्थी, सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी संकाय,
इतिहास विभाग, पेसिफिक यूनिवर्सिटी, उदयपुर

सारांश

भारत के स्वतन्त्रता संग्राम की कहानी अपने आप में अनूठी है और उत्साह तथा प्रेरणा का यह एक ऐसा अक्षय स्त्रोत है जो वर्तमान पीढ़ी के साथ ही आनेवाली पीढ़ियों को भी युग–युगों तक प्रेरित करता रहेगा। देश के स्वतन्त्रता संग्राममें राजस्थान (तत्कालीन राजपूताना) का अपना योगदान रहा है। राजस्थान के स्वतन्त्रता सेनानियों को दोहरे और तिहरे अवरोध एवं यातनाओं का सामना करना पड़ा था। ब्रिटिश राज तो स्वतन्त्रता संग्राम का कट्टर विरोधी था ही, देशीरियासतों के राजा महाराजा और गाँवों के जागीरदार ब्रिटिश राज के प्रति अपनी स्वामी भक्ति दिखाने की उत्सुकता या विवशता में स्वतन्त्रता आन्दोलन को दबाने और कुचलने के लिए बढ़–चढ़ कर प्रयास करते थे। अतएव देश के स्वतन्त्रता संग्राम में राजस्थान के स्वतन्त्रता सेनानियों का योगदान और अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। यह अत्यन्त ही उपयुक्त एवं आवश्यक है कि वर्तमान पीढ़ी एवं आने वाली पीढ़ियाँ निर्भीकता, त्याग एवं देशभक्ति के इस यशस्वी इतिहास को जानें और इससे निरन्तर प्रेरणा लेती रहें। मैंने उपरोक्त बिन्दुओं को दृष्टिगत रखते हुए यह अनुभव किया कि क्यों नहीं भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के दौरान राजस्थान में स्वतन्त्रता संग्राम के ऐसे अमर जननायकों पर शोध कार्य आज की नव पीढ़ी के लिए प्रेरणास्पद रहेगा। इसी ध्येय को लेकर मैंने मोतीलाल तेजावत जैसे स्वतन्त्रता संग्राम के नायक को चुना। जिसका व्यक्तित्व एवं कृतित्व विषयक यह शोध कार्य भावी शोधार्थियों एवं प्रबुद्ध नागरिकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

श्री तेजावत ने स्वतन्त्रता पूर्व बिजौलिया के किसान आन्दोलन एवं साधु गोविन्द गिरी के भगत आन्दोलन की पृष्ठभूमि में मेवाड़ की जनजातीय वर्ग की चेतना में जीवनपर्यन्त योगदान दिया। वे जनजातीय वर्ग के उद्धारक के रूप में जाने जाते हैं। लोकगीतों में मोतीलाल तेजावत को **'मोती बावसी'** कहकर उनका गुणगान करते रहे हैं।[1] आज भी वह जनजातीय वर्ग में पूज्यनीय है। उनकी स्मृति में राजस्थान और गुजरात सरकार ने उनके कार्यों और योगदान को स्मरण रखने के लिए स्मारकों का निर्माण कर रखा है। जैसे कि मोतीलाल तेजावत की व्यग्रतापूर्ण मानसिक स्थिति को समझने के लिए उनके द्वारा लिपिबद्ध की गई उनकी डायरी में से कतिपय उद्धरण देना प्रासंगिक होगा। उन्होंने लिखा है कि ''उन दिनों सामन्तशाही राजा–महाराजाओं व जागीरदारी जुल्मों का सोलह आना बोलबाला था। जागीरदार निजी स्वार्थों के लिए जनता को हैरान, परेशान और तबाह करते थे। सिफारिश, घूंसखोरी तथा जबान को ही प्रजा के लिए कानून बना रखा था। अत्याचारी अहलकार और अन्यायी जागीरदार निजी स्वार्थ के लिए प्रजा को निरन्तर परेशान करते रहते थे। गरीब किसानों पर सामन्तशाही हुकूमत का चक्र जहाँ–तहाँ दिखाई देता था। राजकाज में अपना स्वार्थ सिद्ध करने एवं अपना उल्लू सीधा करने के लिए उन्होंने बेधड़क लूटपाट मचा रखी थी। राज कर्मचारी ऊपर से नीचे तक जनता के हितों का तनिक भी ध्यान नहीं रखते थे और अन्धेरगर्दी मचा रखी थी। इस अंधेरगर्दी का राज्य के अधिकारियों को पूरा पता था। जनता आवेदनों के द्वारा महाराजा के प्रधान आफिसरों को न्याय की उम्मीद रखते हुए आरजू करती थी और

आशा करती थी कि उन्हें न्याय मिलेगा। किन्तु न्याय तो दूर रहा, उल्टे सही बात कहने वालों और न्याय मांगने वालों को 'बदमाश' का खिताब इनायत होता था"।[2]

खालसा मेवाड़ में तो सब लोग हाकिमों, नायबों, थानेदारों और हवलदारों से परेशान थे तथा जागीरों की जनता जागीरदारों के जुल्मों से तंग थी। राजाओं एवं जागीरदारों की मिलीभगत का उल्लेख करते हुए श्री तेजावत ने लिखा है –''अन्यायी, अत्याचारी राजा और जागीरदार एक दूसरे से मिले हुए थे और एक दूसरे के ऐब छिपाते थे। कठोर हुकूमत, घूंसखोरी और लूटपाट करते हुए जनता पर नित नए मनगढंत आरोप लगाकर उन्हें परेशान करती थी। जनता असहाय होकर निराशा के अन्धकार में डूबी हुई थी। गरीबों और इज्जतदारों की इज्जत खतरे में थी। जागीरदार एवं अधिकारी जनता को ठगकर पैसा खा जाते थे। सही बात कहने पर नागरिकों को जूतों से पीटकर इज्जत बिगाड़ दी जाती थी और कमर व गर्दन तोड़ दी जाती थी। छोटे–बड़े जागीरदार तो जनता को अपना गुलाम समझते थे। बेबस, अनपढ़ लोगों पर चाहे जैसा जुल्म करना उनका अधिकार माना जाता था। सरकार के लोग व जागीरदार के नौकर लोगों की जमीन, पशु–मवेशी तथा औरतों को जबरन ले जाते थे और कोई चूँ तक करने का साहस नहीं कर सकता था। गाय–भैंस दूहकर जबरन दूध ले लेना भी उनका हक बन चुका था। घास, लकड़ी, कण्डे, दूध–दही, खाट, बिस्तर व बर्तन वगैरह सब जरूरी सामान मुफ्त में ले लेने का उनका पूरा अधिकार था। अगर कोई मना करता तो उसे धक्के मारकर व जूतों से पीटकर दण्डित किया जाता था और जबरन बेगार ली जाती थी। अंग्रेज सरकार का अदना कर्मचारी भी जब रियासत में आता तो उसके पास शिकायत नहीं करने दी जाती थी।''[3]

राजाओं एवं जागीरदारों के इलाकों में गोरे साहबों के शिकार के लिये आने पर जनता की शामत आ जाती थी। महीने–डेढ़ महीने पहले से ही उनके स्वागत के लिए जनता से घास, लकड़ी, घी, बरतन आदि मुफ्त में ले लिये जाते थे। हर घर से एक आदमी को बेगार के लिए तैनात रहना पड़ता था। घास व लकड़ी का भारी ढ़ेर लगवा दिया जाता था। साहब के जाने के बाद बेगार से ठिकाने का साल भर का खर्चा बचा लिया जाता था। रियासती अफसर तो मरने के बाद भी मुसीबत का कारण बन जाते थे। रियासत में कोई बड़ा हाकिम या अफसर मर जाता था तो 100 मण गेहूँ एवं 50 मण घी खरीदने का हुक्त हो जाता। अत्याचारी अधिकारी बनियों को बुलाकर उनसे इस सामग्री की मांग करते थे और जब वे गिड़गिड़ाते तो उन्हें डराते, दबाते और परेशान करते थे।[4]

उपर्युक्त अन्याय का जनता किसी भी प्रकार से प्रतिकार नहीं कर सकती थी। यदि कोई अखबार में इस अन्याय के बारे में गुप्त खबर छपवाता तो अखबार की प्रति पर जूते फटकारे जाते थे। जागीरदारों एवं बड़े–बड़े हाकिमों के लिए गुप्तकर के रूप में रूपया बंधा होता था। अफसर जिन्दगी भर के लिए धनवान बन जाते थे। हवेलियाँ झुक जाती थी। नाई, कुम्हार आदि सभी जातियों से मुफ्त बेगार में काम कराया जाता था और मुफ्त बर्तन आदि लिये जाते थे। व्यापारियों से निरख के भाव खरीद कर रूपये के पीछे चार आने दे दिये जाते थे।

श्री तेजावत की डायरी के उपर्युक्त उद्धरणों में आदिवासी भीलों की दुर्दशा का प्रभावी चित्रण मिलता है। इस विवरण से ज्ञात होता है कि तिहरी गुलामी का बोझ आदिवासी भीलों को कैसे त्रस्त कर रहा था, सत्ताधारी उन पर कैसे अकल्पनीय अत्याचार कर रहे थे और बेबस होकर वे किस प्रकार इस राक्षसी व्यवस्था की क्रूरताओं को झेल रहे थे। जागीरदारों की उद्दण्डता व नृशंसता की कोई सीमा नहीं थी, क्योंकि वे जनता को अपना गुलाम और स्वयं को उनका भाग्यविधाता समझते थे।[5] श्री तेजावत ने अपनी डायरी में जुल्मोंसितम की अनेक ऐसी घटनाओं का वर्णन किया है जो उन्होंने प्रत्यक्ष देखी थी। अन्याय तथा उत्पीड़न के शिकार हुए व्यक्तियों की उन्होंने लम्बी सूची भी दी है तथा अत्याचारों के अनेक दुखदायी प्रकरणों का उल्लेख भी किया है।

श्री तेजावत आदिवासी भीलों की दयनीय स्थिति से अत्यधिक क्षुब्ध एवं व्यग्र थे। वे आतुरता से ऐसे अवसर की प्रतीक्षा कर रहे थे जब आदिवासियों एवं किसानों के वृहद् समुदाय से उनका सम्पर्क हो जाए, वे उन्हें संगठित करें तथा अन्यायी व्यवस्था के विरूद्ध संघर्ष के लिए तैयार कर सकें। मेवाड़ में छोटे–बड़े अनेक तीर्थस्थल हैं जहाँ किसी न किसी धार्मिक पर्व पर मेलों एवं विविध अनुष्ठानों के आयोजन होते रहते हैं। चित्तौड़गढ़ जिले में बनास नदी के तट पर स्थित मातृकुंडिया नामक तीर्थ स्थल पर प्रतिवर्ष बैसाखी पूर्णिमा के पावन पर्व पर प्राचीन समय से ही एक प्रसिद्ध मेला लगता है जिसमें अपार जनसमूह इकट्ठा होता है।[6] इस मेले में उस समय भी प्रायः एक लाख व्यक्ति एकत्रित होते थे और उनमें अधिकांश किसान होते थे। जनजागरण तथा संगठन करने के अपने अभियान का श्रीगणेश करने के लिए श्री तेजावत अपने कुछ साथियों के साथ इस मेले में पहुँचे।

मेवाड़ के सभी क्षेत्रों के किसानों में जागीरदारी शोषण एवं उत्पीड़न के विरूद्ध तीव्र आक्रोश तो पहले से ही व्याप्त था। मेवाड़ में बिजौलिया के किसान आन्दोलन ने भी किसानों के असन्तोष को बढ़ाया था और उनमें अन्याय के विरूद्ध संघर्ष के लिए साहस का संचार किया था।[7] अब तो केवल नेतृत्व देने वाले एक साहसी योद्धा की आवश्यकता थी जो इस जनाक्रोश को एक निश्चित लक्ष्य की ओर मोड़ सके। ठीक ऐसे समय मेले में श्री तेजावत अवतरित हुए। श्री तेजावत ने स्थान–स्थान से आए किसानों के साथ सम्पर्क कर उन्हें जागीरदारों के प्रचलित अत्याचारों से अवगत कराया और उन्हें संगठित होकर संघर्ष करने के लिए आह्वान किया। वहाँ सभी गांवों के पंचों से विस्तार से विचार–विमर्श कर यह निर्णय लिया गया कि जब तक इस अन्याय व अत्याचार की पूरी जानकारी मेवाड़ महाराणा को नहीं दे देंगे तब तक कोई भी किसान राज्य को लगान का भुगतान नहीं करेगा।[8] सभी पंचों तथा किसानों ने धर्म एवं भगवान एकलिंगजी की शपथ लेकर इस निर्णय को मूर्त्तरूप देने का संकल्प लिया।

मेले में सार्वजनिक घोषणा करवाकर वहाँ आए सभी किसानों को इस निश्चय की जानकारी दे दी गई। पंचों के इस निर्णय से सम्बन्धित पाँच–पाँच पर्चे सभी गाँवों को भेज दिए गए। इन पर्चों का आशय यही था कि कोई भी किसान सरकारी लगान जमा नहीं कराये तथा हरेक ग्राम में एक समिति बनाई जाए तो ग्राम की जनता को एकत्रित कर उसे लगान न देने के लिए वचनबद्ध करे और कोई भी व्यक्ति ग्राम पंचों की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करे।

'एकी' आन्दोलन का प्रमुख उद्देश्य आदिवासी भीलों व किसानों में पूर्ण एकता स्थापित करना था।[9] उनमें ऐसी अटूट एकता स्थापित करना था। जो किसी भी स्थिति में अपने निर्धारित लक्ष्यों से कभी विचलित न हो। इसीलिए इस आन्दोलन को श्री तेजावत ने 'एकी आन्दोलन' कहा। आदिवासियों एवं किसानों के इस एकीकृत आन्दोलन का प्रमुख ध्येय था, अनुचित भूमिकर एवं अन्यायमूलक लाग–बागों को समाप्त करना जिनके कारण किसानों का जीवन असह्य त्रासदी बन गया था।[10]

यद्यपि आदिवासी भीलों एवं किसानों के मन में आक्रोश एवं असन्तोष की आग धधक रही थी, श्री तेजावत ने उन्हें अहिंसा के माध्यम से अन्याय का प्रतिकार करने का पाठ पढ़ाया। सिद्धान्त एवं क्रिया दोनों दृष्टि से ऐक्य आन्दोलन पूर्णतः अहिंसक था और आगे भी अहिंसक ही बना रहा। किसी भी व्यक्ति के मन में यह विचार तक नहीं आया कि लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक होने पर हिंसा का सहारा भी लिया जा सकता है। श्री तेजावत द्वारा प्रतिपादित एवं प्रवर्त्तित यह 'ऐक्य' आन्दोलन महात्मा गाँधी के अहिंसात्मक सत्याग्रह की अवधारणा के अनुरूप था। महात्मा गाँधी के चिन्तन में साध्य एवं साधन, दोनों की पवित्रता पर विशेष आग्रह था और 'एकी' आन्दोलन में भी इन गाँधीवादी सिद्धान्त का सहज पालन किया गया।[11]

श्री तेजावत ने बहुत ही गोपनीय ढंग से भोमट क्षेत्र के गाँव–गाँव में एकी आन्दोलन के उद्देश्यों का प्रचार किया। उन्होंने व्यक्तिगत रूप से स्वयं गांवों में जाकर भोले–भाले व अशिक्षित आदिवासियों को यह समझाया कि किस प्रकार सरकार एवं जागीरदारों के अन्यायपूर्ण शोषण एवं उत्पीड़न के कारण उनका जीवन शोषण की पराकाष्ठा से ग्रस्त है और किस प्रकार उन्हें जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं से भी वंचित किया गया है।[12] श्री तेजावत ने उन्हें उनके न्याय–सम्मत अधिकारों से अवगत कराया और समझाया कि जागीरदारों के अन्याय एवं अत्याचारों से मुक्त हो जाने पर उनका जीवन भी सुखद एवं मानवीय स्तर का बन सकता है। श्री तेजावत उन निरीह प्रकृति पुत्र भीलों को स्वप्निल संसार के मायालोक में नहीं ले गए, वरन् यथार्थ की ठोस धरती पर खड़े होकर उन्हें अपना उद्‌बोधन दिया। आदिवासी भीलों व किसानों को उनकी बोधगम्य शैली में ही यह समझाने का प्रयास किया गया कि वर्तमान पशुतुल्य जीवन से उनका कैसे उद्धार हो सकेगा और उनके वर्तमान अन्धकारमय जीवन में प्रकाश की ज्योति कहाँ से और कैसे आएगी। गोविन्द गिरि के बाद राजस्थान एवं गुजरात के भील बहुल प्रदेश में जन-जागृति उत्पन्न करने एवं तत्कालीन सामन्ती–साम्राज्यवादी उत्पीड़न के विरूद्ध जबरदस्त आन्दोलन करने का श्रेय स्वर्गीय मोतीलाल तेजावत को जाता है। जिन्हें भील आज भी आदर और श्रृद्धा से 'मोती बावसी' कहते हैं। प्रस्तुत गीत में वर्णन है

गीत मोती बावसी रो[13] –

मोतीलाल तेजावत वानीयू कजीयों करे।
कोल्यारी नुं वाणीयु कजीयो करे.....
हासुं राई ने केवँ बोले
हासुं दुखी दुनिया दुखी
हासुं राजा दुखी करे
हासुं वनकी वेट करावे
हासुं दूनो वराड़ लेवे
हासुं राजा लरतुं आवे
हासुं हाल हबा रूपीयो
हासुं भीले एके करे.....अपुर्ण.

संदर्भ (पादटिप्पणियाँ)

1. भगवती जैन : स्वतन्त्रता संग्राम में भगत आन्दोलन की भूमिका, बिन्दू प्रिन्टर्स, उदयपुर, 1982 प्रथम संस्करण (गीत मोती बावसी रो) पृ. 56–61
2. पालीवाल, देवीलाल : मेवाड़ का ''एकी'' आन्दोलन और मोतीलाल तेजावत, मधुमति (मासिक) जनवरी 1966, वर्ष 5 अंक 12.
3. कांकरिया प्रेमसिंह : भील क्रान्ति के प्रणेता–मोतीलाल तेजावत (रा.सा.अ. उदयपुर) 1985, पृ. 43
4. शान्ति कुमारी शर्मा : राजस्थान में स्वतन्त्रता संग्राम के अमर पुरोधा मोतीलाल तेजावत, ग्रंथमाला – 37, राजस्थान स्वर्ण जयन्ति समिति, जयपुर, वर्ष 2002, पृ. 6–7
5. जोशी, सुमनेश : राजस्थान में स्वतन्त्राता संग्राम के सेनानी, हेमा प्रिन्टर्स, जयपुर, पृ. 176–179.
6. जैन भगवती : स्वतन्त्रता संग्राम में भगत आन्दोलन की भूमिका, बिन्दू प्रिन्टर्स, उदयपुर, 1982 प्रथम संस्करण (गीत मोती बावसी रो) पृ. 45
7. कांकरिया, प्रेमसिंह : पूर्वोक्त, पृ. 45
8. चौधरी, रामनारायण : आधुनिक राजस्थान का उत्थान, राजस्थान प्रकाशक मंडल, अजमेर, 1974 पृ.77
9. कोठारी देव : स्वतन्त्राता आन्दोलन में मेवाड का योगदान, साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदेपुर, 1993 पृ. 139.
10. सक्सैना, के.एस : राजस्थान में राजनैतिक जनजागरण, एस.चांद. एन्ड कु.न्यु दिल्ली (1971) पृ. 164
11. जोशी करुणा : जनजातीय क्षेत्र में स्वतन्त्राता आन्दोलन, राजस्थान ग्रंन्थागार, जोघपुर पृ. 125
12. शान्ति कुमारी शर्मा : पूर्वोक्त, पृ. 110
13. भगवती जैन : पूर्वोक्त, पृ. 71